ओ३म्

क्या शिल्प शूद्रकर्म है?

डाक्टर मूलचन्द धीमान्

सलावा ज़िला मेरठ निवासी

द्वारा रचित

मार्गशिर शुक्ला १२ सम्वत् १९६८

1911

प्रथम संस्करण १०००, मूल्य प्रति पुस्तक ।।)

Printed by Mattoo Lal at Arya Bhushan Press Meerut

ओ३म्

समर्पण

मान्यवर स्वर्गवासी पिता नानक चन्द जी
धीमान् की सेवा में !

पूज्यवर पिता जी !

आप की इस तुच्छ सन्तान ने जो वेदादि प्रमाणों से जातीय गौरव विषय में यह क्षुद्र पुस्तिका लिखी है सो आप के स्मरण में समर्पित है

पदरज
मूलचन्द

* ओ३म् *

भूमिका

दुनिया के लोग कहते हैं कि ईश्वर की लीला अपार है, परन्तु हमारा विचार है कि अविद्या की लीला भी उससे कुछ न्यून नहीं है। क्या यह अविद्या ही की लीला न थी कि दुर्योधन ने न केवल अपने वंश ही का बल्कि सारे भारतवर्ष का नाश किया, बौद्धों ने वेदों और शास्त्रों को खूब ही पैरों से कुचला और मुसलमानों ने आर्यसन्तान को कष्ट देने में कोई उपाय उठा न रक्खा। यहां तक कि उपरोक्त अवैदिक समय में और विद्याओं के साथ२ शिल्प जैसी महान् उपकारी विद्या भी घृणा की दृष्टिसे देखी जाने लगी। और पक्षपाती लोगों ने ऋषि सन्तान शिल्पियों को शूद्र तक कहने में भी सङ्कोच न किया। अन्त में न्याय कारी दयालु

परमात्मा को यह बातें सहन न हो सकीं। उसने "वास्कोडिगामा" के चित्तमें प्रेरणाकी कि वह कमर कस कर उठे और भारतवर्ष का मार्ग ढूँढे। ऐसा ही हुआ और वह सन् १४९८ ईस्वी में भारत वर्ष के दक्षिण में कालीकट आ पहुंचा। देश का भाग्योदय होना था इस लिये बृटिश कम्पनी का चित्त भी इस ओर आकर्षित हुआ और बृटिश राज्य की नींव पड़ी। घनघोर कालीघटाको जिस प्रकार प्रचण्ड मार्त्तण्ड क्षण भर में नष्ट करदेता है, ठीक उसी प्रकार हमारी न्याय शीला गवर्नमेण्ट ने नगर २ और ग्राम २ में पाठशालायें खोल कर विद्यारूपी सूर्य्य के प्रकाश से अन्धकार रूपी चाण्डालनी अविद्या का नाश किया। विद्या के दान के साथ २ स्वतंत्रता का द्वार भी सब जाति व मतों, निर्धन व धनवानों, बलहीन व सबलोंके लिये यकसां ही खोल कर, सिंह व बकरी को एक घाट पानीपिलाने की कहावत को चरितार्थ कर दिखलाया। यही कारण है कि अवैदिक समय की उत्पन्न हुई भ्रान्ति को दूर करने को अपना कर्तव्य समझ मुझ जैसे तुच्छ मनुष्य को भी इस पुस्तक के (क्या शिल्प शूद्रकर्म्म है ?)

लिखने का साहस हुआ। क्योंकि किसी विद्वान् ने कहा भी है:—

कोऽहं कोहं कुलं किं मे सम्बन्धः को दशोमम।
स्व स्वधर्मो न लुप्येत ह्येवं संचिंतयेद् बुधः॥

आर्य्य सन्तान से छिपा नहीं है कि वैदिक समय में यहां शिल्प का कैसा गौरव था। शिल्पी लोग कैसी मान्य दृष्टि से देखे जाते थे। इस लिये आवश्यक्ता हुई कि वेदों और शास्त्रों के प्रमाण से सर्व साधारण को सचेत किया जावे कि शिल्प एक महागम्भीर विद्या है और द्विजन्माओंमें श्रेष्ठ, ब्राह्मणों ही का कर्म्म है।

आशा है कि सज्जनगण पक्षपात रहित होकर विचारेंगे।

सलावा
आश्विन शुक्ल १०
सं० १९६८

मूलचन्द

ओ३म्

अनुक्रमणिका

विषय पृष्ठ

ईश्वर प्रार्थना.... .... १—२

(१) शूद्र और उसका कर्म्म .... ३—१०

१-शिल्प और सेवा एक नहीं १२

(२) शिल्प एक प्रकारकी महा गम्भीर विद्या है .... १४—३४

१-शिल्प भी एक प्रकार का यज्ञ है २५-२७

(३) शिल्प ब्राह्मण कर्म्म है ३५-७९

१-शिल्पियों का जन्म उत्तम सत्वगुण युक्त होने से होता है। ४०

२-साधारण ब्राह्मणों से शिल्पीब्राह्मण उत्तम होते हैं ४१-४२

३-विप्रों का जन्म अधम सत्वगुण युक्त होने से होता है ४२

४—शिल्प विज्ञान ब्राह्मण का स्वाभाविक कर्म्म है ४३
५—उपनिषदों के बनाने वाले ऋषि शिल्प कर्म्म में भी प्रवीण थे ४५
६—त्रिष्टा शब्द के अर्थ ४७-४८
७—वेदों को पढ़कर शिल्प विद्या सीखना चाहिये ५०
८—शिल्पी लोग पूज्य होते हैं ५३
९—धीमान् शब्द के अर्थ ५५
१०—धीमान् केवल ब्राह्मण ही को कह सक्ते हैं ५५
११—शिल्पी ब्राह्मणों को पञ्चालब्राह्मण कहते हैं ५९
१२—पञ्चालब्राह्मणों के आचार ५९
१३—शिल्पियों का सत्कार करना चाहिये ६८
१४—कारीगरों की स्तुति करनी चाहिये ७०
१५—कारीगरों का नमस्कार करना चाहिये ७१
१६—वाल्मीकि रामायण और शिल्प कर्म्म करने वाले ब्राह्मण ७१-७२
१७—पञ्चाल शब्द की व्याख्या ७७-७९

(४) शिल्प महिमा ८०—१०१

१–तक्षा पूज्य होते हैं ८२

२–तक्षा का वृद्ध पितामाता को युवा बनाना ८२-८४

३-भृगु और रथकार पर्य्यायवाची शब्द हैं ८५-८६

४-तक्षा के लिये धीर, कवि और विपश्चित शब्द ८८—८९

५–तक्षा की प्रशंसा ९०—९१

६-तक्षा को यज्ञ में भाग मिलना ९२—९३

(५) आजकल शिल्प कार्य्य करने वालों में किस २ वर्ण के लोग सम्मिलित हैं .... १०२—१०६

(६) शिल्पीब्राह्मणों के निज कर्त्तव्य में शिथिल होने के कारण १०७—११०

सूचना १११

उर्ध्वो नः पाह्यंहसो नि केतु-

ना विश्वं समत्रिणं दह ।

कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथायजी

वसे विदादेवेषु नोदुवः ॥ १६

ऋ० १ । ३ । १० । १४

हे सर्वोपरि विराजमान परब्रह्म ! आप ऊर्ध्व सब से उत्कृष्ट हो हम को कृपा से उत्कृष्ट गुण वाले करो तथा उर्ध्व देश में

हमारी रक्षा करो, हे सर्व पाप प्रणाशकेश्वर! हमको "केतुना" विज्ञान अर्थात् विविध विद्या दान देके " अंहसः" अविद्यादि महापाप से "निपाहि" (नितराम्पाहि) सदैव अलग रक्खो तथा "विश्वम्" इस सकल संसार का भी नित्य पालन करो, हे सत्य मित्र न्याय कारिन्! जो कोई प्राणी "अत्रिणम्" हमसे शत्रुता करता है उसको और कामक्रोधादि शत्रुओं को आप " सन्दह "सम्यक् भस्मी भूत करो (अच्छे प्रकार जलाओ) (कृधी न ऊर्ध्वान्) हे कृपानिधे! हम को विद्या, शौर्य्य, धैर्य्य, बल, पराक्रम, चातुर्य, विविध धन, ऐश्वर्य, विनयादि गुणों में सब नर देह धारियों से अधिक उत्तम करो तथा "चरथाय, जीवसे" सबसे अधिक आनन्द, भोग सब देशों में अव्याहत गमन (इच्छा नुकूल जाना आना) आरोग्य देह, शुद्ध

मानस बल और विज्ञान इत्यादि के लिये, हमको उत्तमता और अपनी पालनायुक्त करो "विदा" विद्यादिउत्तमोत्तमधन "देवेषु" विद्वानों के बीचमें प्राप्तकरो अर्थात् विद्वानों के मध्य में भी उत्तम प्रतिष्ठायुक्त सदैव हमको रक्खो।

[१] शूद्र और उसका कर्म

प्रथम इस के कि हम यह दिखलावें कि "शिल्प कार्य" शूद्रकर्म नहीं है, इस बात के निर्णय करने की आवश्यक्ता मालूम होती है कि शूद्र किसको कहते हैं और शिल्प विद्या किस विद्या का नाम है॥

अथ शूद्रस्वरूप लक्षणम्

१ एक मेवहि शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।

एतेषा मेव वर्णा नां शुश्रूषा मन सूयया ॥

मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक ९१

अर्थः—(प्रभुः) परमेश्वर ने (शूद्रस्य) जो विद्या हीन जिस को पढ़ने से भी विद्या न आसके शरीर से पुष्ट सेवा में कुशल हो उस **शूद्र** के लिये [एतेषामेव वर्णानाम्] इन ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णों की (अनसूयया) निन्दा से रहित प्रीति से **सेवा** करना (एक मेव कर्म) यही एक कर्म (समादिशत्) करने की आज्ञा दी है ये मूर्खत्वादि गुण और सेवा आदि कर्म जिस व्यक्ति में हों वह शूद्र और शूद्रा है।

संस्कार विधि पृष्ठ २१६

२-न ज्ञानीना प्रशांतात्मा भक्ष्याभक्ष्य रतो।ऽशुचिः शुश्रुषुरनहं कारस्स शूद्र इति संज्ञितः॥

अर्थः—ज्ञान रहित (विद्या से रहित) जिस का आत्मा शान्त न हो अर्थात् पाप करने में बहुधा प्रवृत्त रहे और यह वस्तु खाने योग्य है वा नहीं, इतना ज्ञान जिस को न हो केवल शुश्रूषा से तीनों वर्णों के द्वारा अपना निर्वाह करता हो वह शूद्र है॥

दान करण विधि पृष्ठ १७

बलदेव शर्मा कृत रसिक काशी प्रेस
देहली सम्बत १९४७ वि०

३-शूद्राणां द्विज शुश्रूषा परोधर्मः प्रकीर्त्तितः। अन्यथा कुरुतेकिञ्चित्तद्भवेत्तस्य निष्फलम् ॥

पाराशर संहिता

अर्थः—द्विजातियों की **सेवा** करनाही **शूद्रों** का परम धर्म है इसके सिवाय जो वह और कुछ करता है वह निष्फल होता है ॥

४-शूद्र उन्हीं को कहते थे जो मन्द बुद्धि होने के

कारण विद्याध्ययन नहीं करसक्ते हों, चाहे वे ब्राह्मण के पुत्र हों, क्षत्रियके वैश्य के वा शूद्र के ॥

भारत वर्ष का इतिहास पृष्ठ १४६
श्रीमान् प्रोफ़ेसर रामदेवजी, गुरुकुल महा विद्यालय काङ्गड़ी (हरिद्वार) रचित.

५-कृषिस्तुचोत्तमा वृत्तिर्या सरिन्मातृकामता ।मध्यमा वैश्य वृत्तिश्च शूद्र वृत्तिस्तु चाधमा ॥

शुक्र नीति अध्याय ३ श्लोक २७४

अर्थः—नदी है माता जिस की ऐसी जीविका खेती सब से उत्तम है। वैश्य की जीविका व्यवसाय मध्यम है और शूद्र की जीविका सेवा अधम है॥

बा० पद्म देव नारायण पांडेय अनुवादित

६- सर्व भक्षरतिर्नित्यं सर्व कर्म करोऽशुचिः। त्यक्त वेदस्त्व नाचारः सवै शूद्र इति स्मृतः॥

महाभारत शान्ति पर्व अध्याय १८९

अर्थ—सब वस्तुओं के खाने में जिसकी

नित्य रति (प्रीति) है, सब कामना करने वाला, और अशुद्ध है, वेद जिस से छूटा हुआ है और जो सदाचार रहित है वही शूद्र कहलाता है ॥

वर्ण व्यवस्था पृष्ठ १०

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि जो मन्द बुद्धि होने से विद्याध्ययन न कर सक्ता हो अर्थात् विद्या से रहित हो जिस की आत्मा शान्त न हो और जिसको यह भी ज्ञान न हो कि अमुक वस्तु खाने योग्य है वा नहीं और जो पाप करने ही में प्रवृत रहे उस को शूद्र कहते हैं। और उसका एक मात्र धर्म (कर्म) द्विजातियों की सेवा करना है।

अब विचारना यह है कि वास्तव में सेवा करना शूद्र का काम है परन्तु आजकल के पक्ष पाती महाशयों की बुद्धि अनुसार

शिल्प भी शूद्र कर्म है तो क्या शिल्प कार्य भी सेवा करने ही को कहते हैं अथवा किसी अन्य कार्य को । यदि शिल्प को सेवा करना ही मान लिया जावे तो इस रीति से तो कृषिकर्म भी सेवा होसक्ता है क्योंकि जिस प्रकार एक शिल्पी, शिल्पकार्य से मनुष्यों का उपकार करता है उसी प्रकार एक वैश्य भी (शास्त्रानुसार कृषि कर्म वैश्य कर्म है) कृषि कर्म से मनुष्यों का उपकार करता है परन्तु आजतक किसी भी विद्वान ने कृषि कर्म को सेवा कर्म नहीं माना ॥ इस हेतु इस बातके निर्णय करनेके लिये कि शिल्प सेवा ही को कहते हैं वा किसी अन्य कार्य को, हम मनुस्मृति का एक श्लोक नीचे उद्धृत करते हैं ॥

विद्या शिल्पं भृतिः सेवा
गो रक्षं विपणिः कृषिः ।
धृति भैक्ष्यं कुसीदं च
दश जीवन हेतवः ॥

मनुस्मृति अध्याय १० श्लोक ११६

अर्थः—यह दश जीवन के हेतु हैं १ विद्या २ **शिल्प** ३ नौकरी ४ **सेवा** ५ पशुरक्षा ६ दुकानदारी ७ खेती ८ धृति ९ भिक्षा १० व्याज ॥

The ten means of living are Literary profession, Handicraft **शिल्प** Superior Service, menial

Service सेवा Tending Cattle Commerce, Agriculture, Wage work, Beggary and Interest.

Harbinger No III
1st February 1899
Virjanand Press Lahore

उपरोक्त श्लोकसे स्पष्टहै कि सेवा और शिल्प एक नहीं बल्कि दोनों में बहुत अन्तर है। इस लिये सिद्ध है कि शिल्प जैसी गम्भीर विद्या का पढ़ना और शिल्प कार्य्य करना शूद्रों का काम नहीं है। इस के अतिरिक्त अमरकोश में विज्ञान शब्द के अर्थ इस प्रकार लिखे हैं। "मोक्ष से अन्यत्र शिल्प विद्या और शास्त्र में बुद्धि लगाने का नाम विज्ञान है"॥

इस लिये यदि हम शिल्प को शूद्र कर्म मान भी लें तो फिर यह शंका रहजाती है कि शूद्र शिल्प और शास्त्र में बुद्धि लगाते हैं या कोई द्विजन्मा ब्राह्मण ? इसका उत्तर बहुत सरल है और उसको हम पाठकों ही पर छोड़ते हैं ॥

[२] शिल्प एक प्रकारकी महा गम्भीर विद्या है.

जब यह निश्चय होगया कि शिल्प शूद्र कर्म नहीं है तो अब प्रश्न यह होता है कि शिल्पविद्या किस को कहते हैं तो उत्तर यह है कि जिस विद्या से सृष्टि के मनुष्यों के सुखार्थ अनेक प्रकार के गढ़, मन्दिर, पुल, स्थल और जलयान, तार तथा विमानादि अनेक उपयोगी वस्तु बनाई जाती हैं उसको शिल्पविद्या कहते हैं यदि किसी को यह भ्रम हो कि शिल्प कोई विद्या नहीं है तो ऐसे पुरुषों के लिये हम कुछ प्रमाण आगे देते हैं जिन से स्पष्ट सिद्ध है कि शिल्प भी और विद्याओं की तरह एक महागम्भीर विद्या है। जैसा कि:—

१-प्रासादं परिखां दुर्गं प्राकारं प्रतिमां तथा । यन्त्राणि सेतु बन्धञ्च वापींकूपं तड़ागकम् ।१५९।तथा पुष्करिणीं कुण्डं जलाद्यूर्द्ध गति क्रियाम् । सुशिल्प शास्त्रतः सम्यक् सुरम्यन्तु यथा भवेत् ॥१६०॥ *कर्तुंजानाति

---

* १६१ वें श्लोक को हमने जानबूझकर आधा नहीं लिखा किन्तु मूल पुस्तक ही में ऐसा है

य: सैव गृहाद्याधिपतिः स्मृतः ॥१६१॥

अर्थः—जो शिल्प शास्त्र को भली भांति अवलोकन करके सुन्दर देव मन्दिर, राजभवन, किला, खाई, प्राचीर (चहार दीवारी) प्रतिमा [मूर्ति] यंत्र, पुल, बावड़ी, कुवाँ तालाब, पुष्करिणी, कुण्ड और जलके ऊपर चढ़ाने की क्रिया को अत्यन्त मनोहर बनाने जानता हो उसी को गृहादिक का अध्यक्ष बनावे १५९।१६० १६१। शुक्र नीति अध्याय २

बा० पद्मदेव नारायण पांडेय अनुवादित

२-वैतालिकाः सुकवयो वेत्र

दण्ड धराश्चये। शिल्पज्ञाश्च कलावन्तो ये सदा प्युप कारकाः ॥

शुक्रनीति अध्याय २ श्लो० १९४

अर्थः—वैतालिकों, उत्कृष्ट कवियों, बल्लम वालों, **शिल्पविद्या** जानने वालों, चौंसठ कला के जानने वालों और देश हितैषी पुरुषों को, चाहिये कि राजा रक्खे

बा० पद्मदेव नारायण पांडेय

अनुवादित

३-"जो इस प्रकारसे इन **शिल्पविद्या रूप श्रेष्ठ यज्ञ** करने वाले सब

भोगों से युक्त होते हैं वे कभी दुखी होके नष्ट नहीं होते और सदा पराक्रम से बढ़ते जाते हैं क्योंकि कला कौशलता से युक्त वायु और अग्नि आदि पदार्थों की अर्थात् कलाओं से पूर्व स्थान को छोड़ के मनो वेग यानों से जाते आते हैं उनही से मनुष्यों का सुख भी बढ़ता है इस लिये इन उत्तम यानों को अवश्य सिद्ध करें ॥"

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
पृष्ठ २०६ पंक्ति २३ से २८

४-" इस **महागम्भीर शिल्प विद्या** को सर्व साधारण लोग नहीं जान सक्ते किन्तु जो महाविद्वान् हस्त क्रिया में चतुर और पुरुषार्थी लोग हैं वेही सिद्ध कर सक्ते हैं ॥ इस विषय के वेदों में बहुत मन्त्र

हैं परन्तु यहां थोड़ा ही लिखने में बुद्धिमान् लोग बहुत समझ लेंगे ॥ ”

ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका

पृष्ठ २०८ व २०९

५-धर्माधिकरणं शिल्प शालां कुर्य्यादु दग्गृहात् । पञ्चमांशाधिको च्छाया भित्ति र्विस्तारतो गृहे ॥

शुक्र नीति प्रथम अध्याय श्लो० २२८

अर्थः—धर्म विचार का गृह (जहां वादी प्रतिवादी का न्याय विचार किया जाय) और शिल्प गृह (जिसमें गृह निर्माणादि का विचार हो) राज मन्दिर की उत्तर दिशा में बनावे और राज गृह की भित्ति

गृह के विस्तार से पंचमांश अधिक ऊंची होनी चाहिये ॥

बा० पद्मदेव नारायण पाण्डेय अनुवादित

टि० यदि शिल्प शूद्र के ही करने योग्य कार्य है तो पूर्व समय में शिल्प गृह को राज मन्दिर के समीप बनाने की क्या आवश्यक्ता होती थी। क्या राजा उस गृह में शूद्रों के साथ बैठकर विचार किया करता था। यदि नहीं तो जिन लोगों से मंत्रणा ली जाती थी क्या वह शिल्प से अनभिज्ञ होते थे ॥ नहीं महाशय ! जैसे आजकल भी गवर्नमेण्ट शिल्प सम्बन्धी सब कार्यों की सम्मति अपने शिल्प अध्यक्षों (इंजिनयरों) ही से लेती है मूर्ख और नीच लोगों से नहीं (जोकि शिल्प विद्या को सीख ही नहीं सक्ते) पूर्व समय में भी ऐसा ही होता था

जब यह मालूम हो गया कि शिल्प गृह में यदि विचार किया जा सक्ता है तो केवल शिल्पियों से मिलकर ही होसकता है अन्यों से नहीं तो भला जिन विद्वानों से राजा गृह निर्माणादि का विचार करते थे क्या वह शिल्पविद्या ही के विद्वान नथे ॥

६-स्त्रियोरत्नान्यथो विद्या धर्मःशौचंसुभाषितम् । विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वतः ॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २४०
पं० तुलसी राम स्वामी की अनुवादित

अर्थः— स्त्री, रत्न, विद्या, धर्म, शौच, अच्छे वचन और अनेक प्रकार की **शिल्प**

विद्या सब से ग्रहण करले ॥

७– "तत्पश्चात् अथर्ववेद का उपवेद अर्थवेद

जिसको शिल्प शास्त्र कहते हैं जिसमें विश्वकर्मा, त्वष्टा और मय कृत संहिता ग्रन्थ हैं उनको ६ वर्ष के भीतर पढ़के विमान, तार और भूगर्भादि विद्याओं को साक्षात करें"

संस्कार विधिः पृष्ठ ११०

८– " (यज्ञैः) अग्निष्टोमादि, तथा

शिल्पविद्या विज्ञानादि यज्ञोंकेसेवनसे"

भारतवर्ष का इतिहास

पृष्ठ २२९ पंक्ति ९ द्वितीयावृत्ति सं० १९६८

(श्रीमान प्रोफ़ेसर रामदेव जी गुरुकुल महाविद्यालय कांगड़ी (हरिद्वार) रचित)

९– "अर्थवेद–अथर्ववेद का उपवेदहै ।

इसका उद्देश्य नाना प्रकार के कला कौशल और विमान आदि यान तथा **शिल्प विद्या** के नियमोंकी जोकि वेदों में मिलते हैं व्याख्या करने का है ॥

आर्य धर्मेन्द्र जीवन का उपोद्घात पृष्ठ ७
मास्टर आत्माराम जी लिखित

१०—देखो शिल्प के अर्थ श्रीधर भाषा कोष क्या लिखता है:—

शिल्प (शिल-चुनना, या शिल्प कारीगरी का काम करना) । पु० । **कलविद्या**, हुनर, गुण, कारीगरी ।

श्रीधर भाषा कोष पृष्ठ ६४७

११—और भी देखिये कि गीता के

अध्याय १८ और श्लोक ४२ में विज्ञान को भी ब्राह्मण का स्वाभाविक कर्म बतलाया है जैसा किः—

शमोदम स्तपः शौच क्षान्ति रार्जव मेवच।
ज्ञानं विज्ञान मास्तिक्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम्॥

देखिये विज्ञान शब्द के अर्थः—

(अ) **विज्ञान** (वि= बहुत, ज्ञा= जानना) पु०। बहुत ज्ञान, शास्त्र ज्ञान, **शिल्प ज्ञान**

श्रीधर भाषा कोष पृष्ठ ६१९

टि० यदि इस स्थल पर यह आक्षेप हो कि श्रीधर कोष साधारण भाषा कोप है तो देखिये जैनियों के परम पुरुषा अमर सिंह भी इस विषय में क्या कहते हैं:—

(ब) **अन्यत्र विज्ञानं शिल्प**

शास्त्रयोः ॥

भाषा--मोक्ष से अन्यत्र शिल्प विद्या और शास्त्रमें बुद्धि लगाने का नाम ॥ १ ॥
॥ विज्ञान ॥

अमरकोष प्रथम काण्ड " धी " वर्ग
(वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई)

१२- शिल्पभी एक प्रकार का यज्ञ है:—

वसोः पवित्र मासि द्यौरसि पृथिव्यासि मातारिश्वनोघर्मो सि विश्वधा असि । परमेण

धाम्ना दृ ꣳ हस्वमाह्वार्मा ते यज्ञपति ह्वार्षीत् ॥ २ ॥

यजुर्वेद प्रथम अध्याय

पदार्थः—हे विद्यायुक्त मनुष्य तू जो (वसोः) यज्ञ (पवित्रं) शुद्धि का हेतु। (असि) है। (द्यौः) जो विज्ञानके प्रकाशका हेतु और सूर्य की किरणों में स्थिर होनेवाला। (असि) है जो (पृथिवी) वायुके साथ देश देशान्तरों में फैलने वाला। (असि) है जो (विश्वधाः) संसार का धारण करने वाला (असि) है। तथा जो (परमेण) उत्तम (धाम्ना) स्थानसे (दृꣳहस्व) सुखका बढ़ाने वाला है। इस यज्ञ का (मा) मत (ह्वाः) त्याग कर। तथा [ते] तेरा (यज्ञ पतिः) यज्ञ की रक्षा करने वाला

यजमान भी उसको (मा) न (ह्वार्षीत्) त्यागे

धात्वर्थ के अभिप्राय से यज्ञ शब्द का अर्थतीन प्रकारका होताहै अर्थात् एक जो इस लोक और परलोक के सुख के लिये विद्या ज्ञान और धर्म के सेवन से वृद्ध अर्थात् बड़े२ विद्वान् हैं उन का सत्कार करना। दूसरा अच्छी प्रकार पदार्थों के गुणों के मेल और विरोध के ज्ञान से **शिल्प विद्या** का प्रत्यक्ष करना। और तीसरा नित्य विद्वानों का समागम अथवा शुभगुण विद्या सुख धर्म और सत्य का नित्य दान करना है॥

यजुर्वेद भाष्य अध्याय १ पृष्ठ १०

१३-व्रतं कृणु ताग्नि ब्रह्मा

ग्नि र्यज्ञो वनस्पतिर्य्यज्ञिय:
दैवीन्धि यम्मना महे सुमृ-
डी कामभि ष्टयेवर्चोधां यज्ञ
वाहसꣳसुतीर्थानो असद्वशे
ये देवा मनोजाता मनोयु-
जो दक्ष क्रत वस्ते नोऽवन्तु
तेन: पान्तु तेभ्य: स्वाहा ११

यजुर्वेद चतुर्थ अध्याय मं. ११

भावार्थ:—मनुष्यों को जिस जी अग्नि संज्ञा है उस ब्रह्म को जान और उस की उपासना करके उत्तम बुद्धि को प्राप्त करना

चाहिये । विद्वान् लोग जिस बुद्धि से यज्ञों को सिद्ध करते हैं उससे **शिल्प विद्या कारक यज्ञों को सिद्ध कर के** विद्वानों के संग से विद्या को प्राप्त होके स्वतंत्र व्यवहार में सदा रहना चाहिये क्योंकि बुद्धि के विना कोई भी मनुष्य सुख को नहीं बढ़ा सक्ता। इस से विद्वान् मनुष्यों को उचित है कि सब मनुष्यों के लिये ब्रह्मविद्या और पदार्थ विद्या की बुद्धि की शिक्षा करके निरन्तर रक्षा करें ॥ और वे रक्षा को प्राप्त हुए मनुष्य परमेश्वर वा विद्वानों के उत्तम २ प्रिय कर्मों का आचरण कियाकरें

यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ३०५ भाग १

१४-शिल्पा वैश्व देव्यो रो

हिण्य स्त्रय वं यो वाचेऽविं ज्ञाता आदित्यै सरूपा धा त्रे व त्सतयौं देवानां पत्नी भ्यः ॥ ५ ॥

यजुर्वेद अध्याय २४ मंत्र ५

भावार्थः—जो सबविद्वान् शिल्प विद्या से अनेकों यानआदि बनावें और पशुओं की पालना कर उनसे उपयोग लेवें वे धनवान् हों ॥ ५ ॥

यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ३०५ भाग ३

१५-दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै। प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ।३२।

यजुर्वेद अध्याय २९

पदार्थः—हे मनुष्यो ! जो (दैव्या) विद्वानों में कुशल (होतारा) दानशील (प्रथमा) प्रसिद्ध (सुवाचा) प्रशंसित वाणी वाले [मिमाना] विधान करते हुये [यज्ञम्] संगतिरूप यज्ञके(यजध्यै) करनेको (मनुषः) मनुष्यों को (विदथेषु) विज्ञानों में (प्रचोदयन्ता)

प्रेरणा करते हुए (प्रदिशा) वेद शास्त्रके प्रमाण से (प्राचीनम्) सनातन [ज्योतिः] शिल्पविद्या के प्रकाश का (दिशन्ता) उपदेश करते हुये (कारू) दो कारीगर लोग होवें उन से शिल्प विज्ञान शास्त्र पढ़ना चाहिये ॥ ३२ ॥

यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ६८१ भाग २

१६- आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विडा मनुष्वदिह चेतयन्ती । तिस्रो देवी

बर्हिरेदꣳस्योन ꣳ सरस्वती स्वपसः सदन्तु ॥ ३३ ॥

पदार्थः—हे मनुष्यो ! जो (भारती) शिल्पविद्या को धारण करने हारी क्रिया (इडा) सुन्दर शिक्षित मीठी वाणी (सरस्वती) विज्ञान वाली बुद्धि (इह) इस शिल्पविद्या के ग्रहण रूप व्यवहार में(नः) हमको(तूयम्) वर्धक (यज्ञम्) शिल्प विद्या के प्रकाश रूप यज्ञ को [मनुष्वत] मनुष्य के तुल्य [चेतयन्ती] जनाती हुई हम को [आ,एतु] सब ओर से प्राप्त होवे। ये पूर्वोक्त (तिस्रः) तीन [देवीः]

प्रकाशमान[इदम्]इम (बर्हिः) बढ़े हुये(स्योनम्) सुखकारी काम का (स्वपसः) सुन्दर कर्मों वाले हम को (आ, सदन्तु) अच्छे प्रकार प्राप्त कर ॥ ३२ ॥

भावार्थः—**इस शिल्प व्यवहारमें सुन्दर उपदेश और क्रिया विधि का जताना और विद्याका धारण इष्ट है** यदि इन तीन रीतियों को मनुष्य ग्रहण करें तो बड़ा सुख भोगें ॥ ३२ ॥

यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ६११ भाग २

[३] शिल्प ब्राह्मणकर्म है.

हम दूसरे प्रकरण में सिद्ध कर आये हैं कि शिल्प एक महा गम्भीर विद्या है। और इस का साक्षात करलेना शूद्र का काम नहीं है अर्थात् शूद्र की सामर्थ से बाहर है। अब प्रश्न यह उठता है कि यदि शिल्प शूद्रकर्म नहीं है तो और किस वर्ण का काम है? इस का उत्तर यह है **शिल्पब्राह्मणों ही का कर्म है.** प्रमाण के लिये नीचे देखो—

१ स्वाध्यायेन व्रतै होंमै स्त्रै विद्येनेज्ययासुतैः। महाय

ज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनु ॥

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २८

अर्थः— (स्वाध्यायेन) सकल विद्याओं के पढ़ने पढ़ाने से (व्रतैः) ब्रह्मचर्य, सत्यभाषणादि व्रतों के पालन करने से, (होमैः) अग्निहोत्रादि होम, सत्य के ग्रहण, असत्य के त्याग और सत्य विद्याओं के दान देने से "हु=दानदनयोः" (त्रैविद्येन) वेदस्थ कर्मोपासना और ज्ञान, इन तीन प्रकार की विद्याओं के ग्रहण से (इज्यया) पक्षेष्टयादि करने से (सुतैः) सुसन्तानोत्पत्ति से (महायज्ञैः) ब्रह्म, देव, पितृ, वैश्वदेव और आतिथियों के सेवन रूप पञ्च महायज्ञों के करने से [यज्ञैः] अग्निष्टोमादि, तथा **शिल्पविद्या**

विज्ञानादि यज्ञोंके सेवनसे (ब्राह्मीयं क्रियते तनुः) इस शरीरको ब्राह्मी अर्थात् वेद और परमेश्वरकी भक्तिका आधार रूप **ब्राह्मण**का शरीर कियाजाता है ॥

भारत वर्ष का इतिहास पृष्ठ २२९
द्वितीयावृति सं० १९६८
[श्रीमान् प्रोफ़ेसर रामदेव जी गुरुकुल महा विद्यालय] कांगड़ी (हरिद्वार) रचित

२-ब्रह्मणा शालां निमितां कविभिर्निमितां मिताम् । इन्द्राग्नि रक्षतां शालाममृतौ सोम्यं सदः ॥

अर्थः—(अमृतौ) स्वरूपसे नाश रहित (इन्द्राग्नी) वायु और पावक (कविभिः)

उत्तम विद्वान् शिल्पियों ने

(मिताम्) प्रमाणयुक्त अर्थात् माप में ठीक जैसी चाहिये वैसी (निमिताम्) बनाई हुई (शालाम्) शालाको और [ब्रह्मणा] चारों वेदों के जानने हारे विद्वान् ने सब ऋतुओं में सुख देने हारी [निमिताम्] बनाई (शालाम्) शाला को प्राप्त होकर रहने वालों की (रक्षताम्) रक्षाकरें अर्थात् चारों ओर का शुद्ध वायु आके अशुद्ध वायु को निकालता रहे और जिसमें सुगन्धादि घृत का होम किया जाय वह अग्नि दुर्गन्ध को निकाल सुगन्ध को स्थापन करे वह (सौम्यम्) ऐश्वर्य आरोग्य सर्वदा सुखदायक (सदः)

रहने के लिये उत्तम घर है उसी को निवास के लिये ग्रहण करे॥

संस्कार विधिः पृष्ठ २०४

३-" इस महागम्भीर शिल्प विद्या को सर्व साधारण लोग नहीं जान सक्ते किन्तु जो **महाविद्वान् हस्त क्रियामें चतुर और पुरुषार्थी लोगहैं वेहीसिद्ध करसक्तेहैं"**

ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका
पृष्ठ २०८ व २०९

टि० क्या इन वाक्यों से स्पष्ट नहीं है कि शिल्प शूद्र कर्म्म नहीं है। भलाजो महा विद्वान् होगा उसके ब्राह्मण होने में सन्देह ही क्या हो

सक्ता है ? अर्थात् कुछ नहीं ।

४- ब्रह्मा विश्वसृजो धर्मो महान व्यक्त मेवच। उत्तमां सात्विकी मेतां गति माहु-र्मनीषिणः ॥

मनुस्मृति अध्याय १२ श्लोक ५०

अर्थः-जो उत्तम सत्वगुण युक्त होके उत्तम कर्म करते हैं वे ब्रह्मा सब वेदों का वेत्ता विश्वसृज सब सृष्टि क्रम विद्या को जान कर विविध विमानादि यानों को बनाने

हारे धार्मिक सर्वोत्तम बुद्धि युक्त और अव्यक्त के जन्म और प्रकृति वशित्व सिद्धि को प्राप्त होते हैं ॥

सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २५६

टि० क्या ऊपर लिखे वाक्यों से स्पष्ट सिद्ध नहीं है कि शिल्पी लोगों का जन्म उत्तम सत्वगुण युक्त होने से होता है अब इस बात के निर्णय करने को कि **साधारण ब्राह्मणों** से **शिल्पी ब्राह्मण उत्तम होते हैं** मनुस्मृति का एक दूसरा श्लोक नीचे उद्धृत करते हैं—

तापसा यतयो विप्रायेच वैमानिका गणाः ।
नक्षत्राणिच दैत्याश्च प्रथमासात्विकी गतिः ॥

अर्थः- जो तपस्वी, यति, (संन्यासी) **विप्र** विमान के चलाने वाले, ज्योतिषी और दैत्य (अर्थात् देह पोषक मनुष्य) होते हैं उनको **अधम सत्वगुण के कर्म का फल जानो ॥**

उपरोक्त २ (दो) श्लोकों में से पहलेसे यह सिद्ध है कि शिल्पीब्राह्मण उत्तम सत्वगुण युक्त, और दूसरे से विप्र अर्थात् ब्राह्मण (साधारण) अधम सत्वगुण युक्त होने से होते हैं। अब पाठक स्वयम् विचारलें कि दोनों में कौन उत्तम होता है ॥

५- शमो दमस्तपः शौच क्षान्ति रार्जव मेवच। ज्ञानं

विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥

भ० गीता अध्याय १८ श्लोक ४२

अर्थः- (शमः) मनको बुरे कामों से रोकना (दमः) इन्द्रियों को धर्म में चलाना (तपः) जितेन्द्रिय रहना (शौच) जल से शरीर और धर्मानुष्ठान से आत्मा की शुद्धि करना (क्षान्ति) निन्दा, स्तुति, हर्ष शोक का त्याग (आर्जव) कोमलता को धारण तथा कुटिलतादि दोषों को छोड़ देना (ज्ञान) वेदादि शास्त्रों को सांगोपाङ्ग पढ़ना (विज्ञान) पृथ्वी से लेकर ईश्वर पर्यन्त पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करके अनेक

कला, यंत्र और अस्त्र आदि बनाना और ईश्वर का साक्षात् करना (आस्तिक्य) वेद ईश्वर, मुक्ति, पूर्वजन्म आदि बातों को सत्य मानना यह कर्म और गुण **ब्राह्मण वर्णस्थ मनुष्यों में होने उचित हैं ॥**

भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास पृष्ठ ४१
(बाबूराम शर्मा लिखित)

६–"कोई यह न समझले कि वे **ऋषि** जिन्होंने कि उपनिषदें लिखीं केवल अन्धभगत ही थे। और पदार्थ विद्या तथा नाना प्रकार

की सांसारिक विद्याओं से शून्य थे। वे चारों वेदों के विद्वान्, सम्पूर्ण शास्त्रों के वेत्ता और **कला कौशल और नाना प्रकार के यंत्रादि बनाने में प्रवीण थे ॥"**

आर्य्य धर्मेन्द्र जीवन का उपोद्घात पृष्ठ २१
(मास्टर आत्मा राम जी लिखित)

७—"जब हम आगे बढ़ते हैं तो हमारी दृष्टि एक कलाभवन पर पड़ती है इसके अन्दर जाते ही विचित्र रचना दीख रही है, **अर्थवेद के एक आचार्य महर्षि विश्वकर्मा नाना प्रकार के विमान और कलायंत्र**

बनाने की विधि बतला रहे हैं

इस कला भवन के एक कोने में श्रीकृष्ण से विद्वान् रणभूमि में रथ चलाने की विधि दर्शा रहे हैं। कहीं नल से विद्वान् पाक विद्या में नियुक्त होरहे हैं। मयसे कई इंजिनियर बिल्लौरी महल बनवाने का प्रयत्न कर रहेहैं।

वराहमिहिर से शिष्य गण और शुक्रनीति के निर्माण कर्त्ता नाना प्रकार के कोट (क़िले) सड़कें, पुलें बाँधने के करतब यहां से ही सीख रहे हैं। कई शिल्पी जन

" अशवत्री " नामी जहाज़ बना रहे हैं ॥
अर्थवेद के इतिहास की ओर जब दृष्टि करते हैं तब मुण्डक उपनिषद् बतलाती है कि **अर्थवेद तथा ब्रह्मविद्या के प्रथम गुरु महर्षि ब्रह्मा जी हुए हैं** जिन्होंने कि मनुष्य जाति को अर्थ और परमार्थ के उत्तम रत्नों से सुभूषित कर दिया था ॥

आर्य्य धर्मेन्द्र जीवन का उपोद्घात पृष्ठ ३२
मास्टर आत्मा रामजी लिखित

८- अन्यत्र विज्ञानं शिल्प शास्त्रयोः ॥

अमरकोश प्रथम काण्ड "धी" वर्ग

(भाषा) मोक्षसे अन्यत्र **शिल्पविद्या** और शास्त्र में बुद्धि लगाने का नाम

॥ विज्ञान ॥

टि० यदि शिल्पी ब्राह्मण नहीं होते तो क्या शूद्र भी शास्त्र और शिल्प विद्या में बुद्धि लगाया करते हैं! पाठकों को यहां स्मरण रखना चाहिये कि गीता के अध्याय १८ श्लो० ४२ में विज्ञान को भी ब्राह्मण का स्वाभाविक कर्म्म बतलाया गया है॥

९-ऋक्सामयोः शिल्पे स्थ-स्ते वामारभे ते मा पात मास्य यज्ञस्योदृचः शर्म्मासि

शर्म्म मे यच्छ नमस्तेऽस्तु माहिꣳसीः ॥ ९ ॥

यजुर्वेद अध्याय ४ मंत्र ९

पदार्थः—हे विद्वन् आप जो मैं (ऋक्सामयोः) ऋग्वेद और सामवेदके पढ़नेके पीछे। (उद्दचः) जिसमें अच्छे प्रकार ऋचा प्रत्यक्ष की जाती हैं। (अस्य) इस। (यज्ञस्य) शिल्पविद्या से सिद्ध हुये यज्ञके सम्बन्धी। (वाम्) ये (शिल्पे) मन वा प्रसिद्ध क्रिया से सिद्ध की हुई कारीगरी विद्याओंको। (आरभे) आरम्भ करता हूं तथा जो। (मा) मेरी। (पातम्) रक्षा करते हैं। (ते) वे। (स्थः) हैं। उनको विद्वानों के सकाश से ग्रहण करता हूं। हे विद्वान् मनुष्य। (ते) उस तेरे लिये। (मे) मेरा (नमः) अन्नादि

सत्कार पूर्वक नमस्कार । (अस्तु) विदित हो तथा तुम । (मा) मुझको चलायमान मत करो और । (यत) जो । (शर्म) सुख । (असि) है उस । (शर्म) सुखको (मे) मेरे लिये । (यच्छ) देओ ॥ ९ ॥

भावार्थ-**मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों के सकाश से वेदोंको पढ़कर शिल्पविद्या वा हस्त क्रियाको साक्षात् कार कर विमान आदि यानोंकी सिद्धि रूप कार्यों को सिद्ध करके सुखों की**

उन्नति करें ॥

यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ३००

१०- अश्मयः सरपसस्त

रा य कं तुर्वीतयेच वय्याय

च स्रुतिम्। नीचा सन्त मुद

नयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं

श्रवयन्त्सास्यु कथ्यः॥१२॥

ऋग्वेद अ० २। अ० ६। व० १२

पदार्थ—हे विद्वान् आप (सरपसः) जिस से पाप चलाये जाते हैं (तराय) उस के उलंघन और (तुर्वीतये] साधनों से व्याप्त होने के लिये (च) और (वय्याय) सूनके

विस्तार करने के लिये (च) भी (स्रुतिम्) नाना प्रकार की चाल को जताइये और (परावृजं) लौटगये हैं त्याग करने वाले जिससे उस मनुष्य को (प्रान्धम्) अत्यन्त अन्धे वा [श्रोणम्) वहिरे के समान [श्रवयन्] सुनाते हुये (नीचा) नीच व्यवहार से[सन्तम्] विद्यमान मनुष्य को उत्तम व्यवहार में (अरमयः) रमाते हैं तथा सब की (उदनयः) उन्नति करते हो इस कारण (सः) वह आप (उक्थ्यः) प्रशंसनीय (असि) हैं ॥

भावार्थः—जैसे शिल्प वेत्ता विद्वान् जन औरों को शिल्प विद्या के दान से उत्कृष्ट करते हुये अन्धे को देखते हुये

के समान वा बहिरे को श्रवण करने वाले के समान बहुश्रुत करते हैं वे **इस संसार में पूज्य होते हैं ॥**

ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ ३१६

(प्रश्न) उपरोक्त प्रमाणों से यह तो ज्ञात होगया कि शिल्प केवल हाथ की कारीगरी ही को नहीं कहते, वरन एक महा गम्भीर विद्या है यहां तक कि वेदों में इस को एक प्रकार का यज्ञ कहा है और यह भी निश्चय होगया कि इसके विद्वान्, सिद्ध करने वाले वा आचार्य्य ब्राह्मण ही हुए हैं। परन्तु यदि देखा जावे तो आज कल जितने ब्राह्मण हैं (गौड़, सनाढ्य, सारस्वतादि) उनमें तो कोई भी शिल्पी नहीं मिलता। तो आप के पास इसका क्या उत्तर

है कि शिल्पियों को किस प्रकार का ब्राह्मण समझा जावे ?

११-(उत्तर) महाशय ! इसका उत्तर देना कोई कठिन काम नहीं है यदि आप पण्डित हरिकृष्ण शास्त्री रचित "ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड" नाम की पुस्तक ही को देखलेते तो आप को यह सन्देह न होता। देखिये इस पुस्तक में भी शिल्पीब्राह्मणों को **पञ्चाल ब्राह्मण** लिखा है ॥

ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड पृष्ठ ५६२

१२-आज कल के शिल्पियों में एक समूह **धीमान्** नाम का भी है॥ धीमान् शब्द "धी" और "मान्" दो शब्दों के योग से बनता है जिसके अर्थ बुद्धिमान् के हैं।

इस शब्द के अर्थ अमरकोश के रचयिता अमरसिंह जैनी ने भी " पण्डित " के किये हैं। और इस शब्दका ब्राह्मण वर्ग में रक्खा है। अमरकोश के इस प्रमाणसे भी सिद्ध है कि

धीमान् केवल ब्राह्मण ही को कह सक्के हैं अन्य वर्ण को नहीं ॥

और भी देखिये धीमान् शब्द के अर्थः—

धीमान् । पु । बृहस्पतौ । त्रि । पण्डिते । धीर्विद्यतेयस्य । मतुप् । ऊहापोह कुशले ॥

शब्दार्थ चिन्तामणि (कोष) पृष्ठ १३०९ व १३१०

श्रीमान् सुखानन्दनाथजी विरचित

(प्रश्न) इन लोगों को धीमान् तो नहीं कहते हमने तो " ढिमान " ढिमाण " और कहीं कहीं तो "धमान" ही सुना है ॥

(उत्तर)— सत्य है. आपने अवश्य ऐसा ही सुना होगा । परन्तु आपने विद्या रहित मनुष्यों के मुखसे "ब्राह्मण" शब्द के स्थान में बाह्मण, बिरामन- बम्हन, बिरह्मन आदि शब्द भी तो सुने होंगे । इसी प्रकार क्षत्रिय शब्द को भी उर्दू पढ़े लिखे लोग कशत्री और किसी २ स्थान में छत्री ही लिखनें और बोलने लगे हैं । बस यही हाल इस शब्द का भी है ॥

(प्रश्न) अच्छा खैर योंही सही. परन्तु इतना भ्रम अब भी रहता है कि इस जाति को ब्राह्मण न कह कर केवल " धीमान् " ही क्यों कहने लगे ?

(उत्तर) लीजिये हम अभी बतलाये देतेहैं महाभारतके युद्धके पीछे जब वेदोंका पठन पाठन कम होगया तो जिन ब्राह्मणों ने चारों वेद पढ़े वह चतुर्वेदी, तीन वेदों के पढ़ने वाले त्रिवेदी और दो वेद पढ़ने वाले द्विवेदी ब्राह्मण कहलाने लगे। जब इस देश में अविद्याका पूर्ण राज्य हुआतो कुपढ़लोग उन्हीं चतुर्वेदी ब्राह्मणों को (चौबे) नाम से पुकारने लगे और अब भी यही दशा है कि मथुरा के " दानपात्री चतुर्वेदीब्राह्मणों " से जब कोई अनभिज्ञ मनुष्य प्रश्न करता है कि आप कौन वर्ण हैं तो वह स्वयम् भी यही उत्तर देते हैं कि "चौबे" ॥ बस जिस प्रकार चतुर्वेदीब्राह्मण न कह कर इन ब्राह्मणों को केवल 'चौबे' ही कहने लगे ठीक उसी प्रकार इन लोगों को भी " धीमान् " ही

कहने लगे ॥ इसके अतिरिक्त यदि विचार कर देखा जावे तो मन में एक शंका और उठती है। और वह यह है कि वेदों के पढ़ने का अधिकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य तीनोंवर्णोंका समानही है तो फिर ब्राह्मणोंही की यह उपाधियाँ (चतुर्वेदी-त्रिवेदी-द्विवेदी) इस समय क्यों सुनने में आती हैं। और अन्य दो वर्णों में इन उपाधियों का धारण करने वाला एकभी समूह दृष्टिगोचर नहीं होता। इस से यही ज्ञात होता है कि उस समय में भी यह पदवियाँ केवल ब्राह्मणों ही के लिये थीं इसी प्रकार "धीमान्" भी एक उच्च पदवी होने से केवल ब्राह्मणों ही के लिये थी। यदि ऐसा न होता तो अमरकोश का रचयिता (जो एक बहुत ही पुराना कोश है) इस शब्दका ब्राह्मण वर्गमें न रखता ॥

१३- " शिल्पि ब्राह्मण नामानः पंचालाः परि-कीर्तिताः"

शिल्पिब्राह्मणों को पञ्चाल ब्राह्मण कहते हैं ॥

शैवागम अध्याय ७

पञ्चाल ब्राह्मणों के आचार

पांचालानां चसर्वेषामाचार इति गीयते । अष्टांगयोगः कर्म षट्कं पंचयज्ञा इति श्रुतिः ॥ ५१ ॥ यजनं या-जनं चैव तथा चाध्ययनं

स्मृतम्। अध्यापनं ततः प्रो-
क्तं तथा दानं प्रतिग्रहः
॥५२॥ स्नानं संध्या * त्रि
कालेषु अग्नि होत्रं तथैवच।
षट्कर्माण्ये व मेतानि पां-
चालानां स्मृतानिच।५३।
नित्यं नैमित्तिकं कर्म
द्विजातीनां यथा क्रमम्।
पितृयज्ञं भूतयज्ञं दैवयज्ञं

* त्रिकाल संध्यादि मेरा निज मन्तव्य नहीं है ॥

तथैवच ॥ ५४ ॥ जपयज्ञं ब्रह्मयज्ञं पञ्च यज्ञांश्चरंति वै । एवं त्रिविध आचारः कर्त्तारस्ते द्विजातयः ॥ ५५ ॥

ब्राह्मणोत्पत्तिमार्तंपड पृष्ठ ५६७ व ५६८

अब पञ्चाल जाति के आचार कहते हैं । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि करके आठ अङ्ग और षट् कर्म और पञ्च महायज्ञ पञ्चालों के लिये कहा है ॥ ५१ ॥ षट् कर्म कौन से सो कहते हैं– यजन, (यज्ञ करना) याजन, (दूसरे के तरफ़ से यज्ञ कराना) वेद पढ़ना दूसरे को वेद पढ़ाना, दान कहते हैं परलो-

कार्थ द्रव्य सत्पात्र को देना, प्रतिग्रह कहते हैं दूसरा परलोकार्थ द्रव्य देवें सो लेना यह षट् कर्म जानना ॥ ५२ ॥ और प्रातःकाल, मध्यान्ह काल, सायङ्काल, त्रिकाल स्नान और सन्ध्या बन्दन और अग्नि में होम पञ्चालों (* ब्राह्मणों) ने करना ॥५३॥ नित्य कर्म उसको कहते हैं जिस कर्म के करने से विशेष फल नहीं और त्याग करने से न पतित होवे जैसे संध्या वन्दनादि का। अब नैमित्तिक कर्म किसे कहना सो कहते हैं। जिस कर्म के करने से अपनी कामना पूर्ण होवे उसे नैमित्तिक कर्म जानना, जैसे व्रतादिक, ऐसे नित्य नैमित्तिक कर्म पञ्चालों ने करना। पितृयज्ञ (श्राद्ध तर्पण अतिथि पूजन) भूतयज्ञ (बलि हरण) देवयज्ञ, (देव पूजा) ॥ ५४ ॥ जपयज्ञ (गायत्र्यादि जप)

देवता तर्पणादिक, ब्रह्मयज्ञ, ऐसे वे पांच महा यज्ञ, षट् कर्म, अष्टाङ्गयोग वे तीन आचार जो पालन करते हैं वे ब्राह्मण जानना। पंचालों ने पूर्वोक्त तीन कर्म करना।

ब्राह्मणोत्पत्तिमार्तंड पृष्ठ ५६७ व ५६८

१४- प्राचीन काल में जितने सुविख्यात ब्रह्मर्षि हुए हैं वह केवल शिल्प-शास्त्र को पढ़े ही न थे वरन शिल्प क्रिया में भी परम प्रवीण हुए हैं। और आ-वश्यकता पड़ने पर अपने

ही हाथों से इस काम को करते थे। यदि शिल्प नीच वर्ण के करने योग्य कार्य्य होता [जैसा कि आजकल के पक्षपाती कहते हैं] तो ब्रह्मर्षि होकर वह ऐसा काम कदापि न करते॥ हम अपने पाठकों के सूचनार्थ ऐसे ऋषियों की एक संक्षिप्त सूची नीचे देते हैं॥

१ प्रहर्षण .... देखो वसिष्ठ पुराण

२ रैवतक .... देखो वसिष्ठपुराण

३ सनातन...ब्रह्माण्ड-वसिष्ठवस्कन्धपुराण

४ सानग ....ब्रह्माण्ड व वसिष्ठपुराण

५ भृगु ६ अत्रि ७ वसिष्ठ

८ विश्वकर्मा ९ मय १०

नारद ११ नग्नजित १२

विशालाक्ष १३ पुरन्दर १४

ब्रह्मा १५ कुमार १६ नंदीश

१७ शौनक १८ गर्ग १९

शुक्र २० बृहस्पति आदि

श्लोक

भृगुरत्रि र्वसिष्ठश्च विश्वकर्मा मयस्तथा। नाग्दो नग्नजिच्चैव विशालाक्षः पुरन्दरः॥ ब्रह्मा कुमारो नंदीशः शौनकोगर्ग एव च। वासुदेवो ऽनिरुद्धश्च तथा शुक्र बृहस्पती। अष्टा दशैत विख्याताः शिल्पशास्त्रोपदेशकाः॥

मत्स्य पुराण अ० २५२

टि०—उपरोक्त सूची बालशास्त्री रावजी शास्त्री क्षीर-सागर रचित" गोत्र प्रवर दीपिका " नामकी पुस्तक से उद्धृत की गई है॥

१५- एष वः स्तोमो मरुत इयङ्गीर्मान्दार्यस्य मान्य-स्य कारोः। एषा यासीष्ट

तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीर दानुम ॥ ४८ ॥

यजुर्वेद अध्याय ३४

पदार्थः— हे (मरुतः) मरण धर्म वाले मनुष्यो ! (मान्दार्यस्य) प्रशस्त कर्मोंके सेवक उदार चित्त वाले (मान्यस्य) सत्कार केयोग्य (कारोः) पुरुषार्थीकारीगरका (एषः) यह (स्तोमः) प्रशंसा और (इयम्) यह (गीः) वाणी (वः) तुम्हारे लिये उपयोगी होवे तुम लोग (इषा)इच्छा वा अन्न के निमित्त से (वयाम्) अवस्था वाले प्राणियों के (तन्वे) शरीरादि की रक्षा के लिये (आ,यासीष्ट) अच्छेप्रकार

प्राप्त हुआ करो और हमलोग (जीरदानुम्) जीवन के हेतु (इषम्) विज्ञान वा अन्न तथा (वृजनम्) दुःखों के वर्जने वाले बल को (विद्याम्) प्राप्त हों ॥ ४८ ॥

भावार्थः— **मनुष्यों को चाहिये कि सदैव प्रशंसनीय कर्मों का सेवन और शिल्पविद्या के विद्वानोंका सत्कार करके जीवन बल और ऐश्वर्यंको प्राप्त होवें।**

यजुर्वेद चतुर्थ भाग पृष्ठ १०६७

टि० क्या वेदों के मानने वाले इस वेदमंत्र पर ध्यान देंगे ? क्या शिल्पियोंको "शूद्र" और 'नीच' जैसे असभ्य और घृणित शब्द कहने को ही आज कल के वेद

मतावलम्बियों ने सत्कार करना समझ लिया है ! ऐसे ही पुरुषों ने देश को रसातल पहुंचाया है ॥

१६-कारीगर नमस्कार और स्तुति के योग्य होते हैं अर्थात् कारीगरों की स्तुति भी करनी चाहिये और उनको नमस्कार भी करना चाहिये। आजकलके पक्षपाती वैदिक मतानुयायियों को वेद के इस मन्त्र पर ध्यान देना चाहिये।

ईड्यश्चासि वन्द्यश्च वाजिन्नाशुश्चाऽसि मेध्यश्च सप्ते। अग्निष्ट्वा देवैर्वसुभिः सजोषाः प्रीतं वह्निं वहतु जातवेदाः॥ ३॥

यजुर्वेद अध्याय २९

पदार्थः—हे (वाजिन्) प्रशंसित वेगवाले (सप्ते) घोड़े के तुल्य **पुरुषार्थी उत्साही कारीगर विद्वन् !** जिस कारण (जातवेदाः) प्रसिद्ध भोगों वाले (सजोषाः) समान प्रीति युक्त हुए आप (वसुभिः) पृथ्वी आदि (देवैः) दिव्यगुणों वाले पदार्थों के साथ (प्रीतम्) प्रशंसा को प्राप्त (वह्निम्) यज्ञ में होमे हुए पदार्थों को मेघ मण्डल में पहुंचाने वाले अग्नि को (वहतु) प्राप्त कीजिये और जिस (त्वा) आपको (अग्निः) अग्नि पहुंचावे इस लिये **आप** [ईड्यः] **स्तुति के योग्य** (च) **भी** (असि) **हैं** (वन्द्यः)

नमस्कार करने योग्य (च (
भी हैं (च) और (आशुः) शीघ्रगामी
(च) तथा (मेध्यः) समागम करने योग्य
(असि) हैं ॥ २ ॥ यजुर्वेदभाष्य पृष्ठ ६४२

१७—वाल्मीकि रामायण में शिल्पीब्राह्मण ।

इष्टकाश्च यथान्यायं कारि-
ताश्च प्रमाणतः। चितोऽग्नि
ब्राह्मणैस्तत्र कुशलैः शि-
ल्प कर्मणि ॥

वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड
सर्ग १४ श्लोक २८
द्वितीय संस्करण निर्णयसागर प्रेस बम्बई

अर्थः—और ईंट यथाविधि प्रमाण से कराई [बनवाई] गई । वहां **शिल्प कर्म्म में कुशल ब्राह्मणों ने अग्नि-स्थान को बनाया**

भा०—माप में ठीक और विधि पूर्वक बनी हुई ईंटों से शिल्पीब्राह्मणों ने अग्निस्थान को बनाया ॥

१८-(अ) राजतिलक का सब सामान वहां लायागया । तब कृष्ण की आज्ञा पाकर पुरोहित धौम्यने विधिके अनुसार वेदीबनाई ॥

महाभारत पृष्ठ ४५०

(व) "इसके बाद याजकोंने वहाँ सोनेकीईंटोसे अठारह हाथ घेरे की एक तिकोनी गरुड़ाकार वेदी बनाई। उस के दोनों पंख भी सोने के बनाये ॥"

महाभारत पृष्ठ ४७२
इण्डियन प्रेस इलाहाबाद

देखिये याजक शब्द के अर्थः—

(१) **याजक**। ना० पु०। पुरोहित, जो ब्राह्मण दक्षिणा लेकर यज्ञादि कर्म्म करावे ॥ मङ्गलकोष पृष्ठ २९२

(२) आग्नी ध्राद्या धनैर्वार्या ऋत्विजो याज-
काश्च ते ॥ १७ ॥

भाषा—जिसको धन आदि देकर यज्ञ में वरण
किया जाय तिस आग्नीध्र आद
सोलह का नाम २॥ ऋत्विज १ याजक २

अमरकोश "ब्रह्मवर्ग" पृष्ठ १३५

१९- तत्स्यादायुध सम्पन्नं धन धान्ये न वाहनैः। ब्रा-ह्मणैः शिल्पिभि र्यन्त्रैर्यवसे नोदकेनच ॥

मनुस्मृति अध्याय ७ श्लोक ७५

अर्थः—वह [किला] हथयार, धन, धान्य,
घोड़े आदि वाहन, *ब्राह्मणशिल्पी, यन्त्र,

---

* शिल्पकार्य्य करने वाले ब्राह्मण।

भूमे और जल से पूर्ण रहना चाहिये।

उपरोक्त श्लोक में " च " जिसके अर्थ "और" के हैं "ब्राह्मणैः शिल्पिभिः" शब्दों को अलग नहीं करता। किन्तु उसके अभावसे स्पष्ट विदित होता है कि " ब्राह्मणैः " पद "शिल्पिभिः" का विशेषण है। अतः ठीक अर्थ यही है कि " ब्राह्मणशिल्पिओं से " नकि ' ब्राह्मण और शिल्पिओं ' से जैसा अर्थ कि कुल्लूकभट आदि करते हैं॥

(अत्रेकेचन तृतीया विभक्ति को ब्राह्मण शिल्पिशब्दौ विच्छिद्य व्याख्यान्ति। तन्न साम्प्रतम्। चादि विच्छेदक निपाताभावात्। शिल्पि पदं बहूनेव हस्त क्रियोपजीविनश्च-र्म्मकार कुलाल प्रभृती ननु बध्नाति। तान सर्वान प्य किञ्चित्करान् व्यावर्तितुं विशेषण

त्वेन ब्राह्मण पदस्य प्रयुक्तिः ॥]

पं० आशाराम धीमान् बी. ए.

उपरोक्त अर्थ ठीक होने में हमारी सम्मति।

टि०—मनुस्मृति के इस श्लोक में आये "ब्राह्मणैः शिल्पिभिः" शब्दों के अर्थ बहुधा टीकाकारों ने 'ब्राह्मणैः' और 'शिल्पिभिः' शब्दों को पृथक २ करके किये हैं। परन्तु हमारी समझ में यह उनकी भूल है क्योंकि यदि यही अर्थ ठीक मान लिये जावें तो प्रश्न होता है कि दुर्ग (किले) में ब्राह्मण किस प्रयोजन के लिये रक्खा जाय? इस प्रश्न को चित्त में रखते हुए एक महाशय अपने अर्थ की खींच तान में "ब्राह्मण" शब्द के सामने "पढ़ाने और उपदेश करने वाले धार्मिक विद्वान्" की टिप्पणी देते हैं। तात्पर्य्य यह कि किले में ब्राह्मण, विद्या पढ़ाने व उपदेश करने को रक्खा जाय। परन्तु इस टिप्पणी को ठीक मानने से एक सन्देह और पैदा हो जाता है, और वह यह कि राजा को अपने किले में पाठशाला रखने की क्या आवश्यक्ता हो सक्ती थी जब कि उस समय में गुरुकुल मौजूद थे। क्योंकि उस

समय राजा व रङ्क तथा सब वर्णों के लड़के एक ही आचार्य से एक ही गुरुकुल में विद्याध्ययन किया करते थे। जहां तक हम को ज्ञात है राजपुत्रों के लिये पृथक गुरुकुल नहीं होते थे। इन सब बातों के अतिरिक्त इसी अध्याय के श्लोक ७८ में आया है कि "पुरोहित और ऋत्विज" को भी किले में रक्खे। जब किले में पुरोहित के रखने की आज्ञा थी तो क्या पुरोहित का कार्य्य, यथोचित सत्यहितोपदेश करने का नहीं होता था?

पञ्चाल

शब्द पर सामान्य दृष्टि डालने वाले पाठक शायद इसके अर्थ पञ्जाब देश ही के समझलें परन्तु यहां इसके अर्थ ऐसे नहीं हैं क्योंकि यह शब्द इस स्थान में शिल्पी ब्राह्मणों के लिये आया है। इस भ्रम के निवारणार्थ हम कुछ प्रमाण नीचे देते हैं:—

(१) "शिल्पि ब्राह्मण नामानः पंचालाः परिकीर्तिताः" ॥ शैवागम अध्याय ७

अर्थ स्पष्ट है

टि० इस से भी यही सिद्ध होता है कि यह शब्द यहां पंजाब देश के लिये नहीं आया बल्कि शिल्पी ब्राह्मणों के लिये है ॥

(२) " ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड " ग्रन्थ के कर्त्ता पं० हरीकृष्ण शास्त्रीने भी " पंचाल ब्राह्मण" शब्दके अर्थ "पंजाबी ब्राह्मण" के नहीं किये बल्कि ' शिल्पीब्राह्मणों ' ही के किये हैं ॥

(३) * 'पंचाल ब्राह्मण निर्णय' पुस्तकके कर्त्ता श्रीमान् बालशास्त्री रावजी शास्त्री क्षीरसागर ने भी इस शब्द को इस प्रकार सिद्ध किया है ॥ बिश्वकर्म संततीय रथकारांचे पंचाल हे पर्याय नाम देश संबन्धाने नाहीं। शिल्पकर्म सम्बन्धानेआहे (उणादिषु१ पाद-तमि विशि

* टि० जिन महाशयों को अधिक जानने की इच्छा होवे वह उपरोक्त ग्रन्थ मंगाकर देखलेवें ।

विडिम्गाणि कुलि कपिपलि पंचिभ्यः कालन् । पचि व्यक्ती करणे इति धातोः । पचंति शिल्पाचारं स्फुटी कुर्वंतिते पंचालाः ॥ येषां विज्ञान मात्रेण शिल्पाचारः स्फुटी भवेत् ॥) असे वचन आहे एवं शिल्पि वाचक पंचाल शब्द पचिधातु वरून नित्य बहुवचनी कृदन्त आहे, देशवाची पंचाल शब्द (यत्रस्थ प्रजा रक्षणे पंचराजानः अलं इति पंचालो नाम देशः) या भारत निर्देशा वरून एक वचनी तद्धित आहे ॥ इत्यादि २

[४] शिल्प महिमा.

१- तक्षा का आश्चर्यजनक कार्य ॥

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो रथस्त्रिचक्रः परि वर्तते रजः। महत्तद्वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभवः पृथिवीं यच्च पुष्यथ ॥ १ ॥

ऋग्वेद मण्डल ४ । सू० ३६ ॥ अष्टक ३

अर्थः—[ऋभवः] हे रथ बनाने

वाले मनुष्यो ! आप का काम परम प्रशंसनीय है क्योंकि (रथः) आप का बनाया हुआ रथ (रजः + परिवर्तते) आकाश में भ्रमण करता है। वह रथ कैसा है (अनश्वः जातः) बिना घोड़े का। पुनः (अनभीशुः) प्रग्रह रहित अर्थात् लगाम रहित (उक्थ्यः) प्रशंसनीय (त्रिचक्रः) तीन पहिया युक्त ईदृग् रथ आपने तैयार किया है इस हेतु (वः) आप लोगों का (देवस्य + प्रवाचनम्) दिव्य आश्चर्य्य युक्त कर्म्मके प्रख्यात करने वाला (तत् + महत्) वह महान् कर्म्म

है (यत्) जिस कर्म से (द्याम् + पृथिवीं + पुष्यथ) अन्तरिक्ष और पृथिवी दोनों को पुष्ट करते हैं। अर्थात् आप के बनाए विविध प्रकार के रथ पृथिवी ओ आकाश दोनों में व्यापक हो रहे हैं। **इस हेतु आप पूज्य हैं ॥ १ ॥**

२-तक्षाका वृद्ध पितामाता को युवा बनाना ॥

तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम्। जिव्री यत्सन्ता

पितरा सनाजुरा पुनर्युवाना
चरथाय तक्षथ ॥ ३ ॥

ऋग्वेद मण्डल ४ । सूक्त ३६ । अष्टक ३

अर्थः—(वाजाः+ ऋभवः) हे विज्ञानी तक्षाओ ! आप लोग (विभ्वः) विभू=बड़े शक्तिमान् हैं इस हेतु (वः) आप लोगों का (तत्+महित्वनम्) वह माहात्म्य (देवेषु) परम विज्ञानी पुरुषों में (सुप्रवाचनम्+अभवत्) कथन योग्य हुआ ।

अर्थात् परम विज्ञानी पुरुषों के समाज में भी आपके गुणों की चर्चा होती रहती है। कौन वह कर्म्म है सो कहते हैं। आपके (पितरौ) पिता माता (जिव्री) वृद्ध और (सनाजुरा+सन्ता) अत्यन्त जीर्ण होने परभी (चरथाय) स्वच्छन्द विचरण करने को (पुनःयुवानौ+तक्षथ) उनको पुनः आप * युवाबनाते हैं (यत्) यह जो आप का कार्य्य है वह प्रशंसनीय है।

---

* तात्पर्य यह, कि तक्षा लोग विविध प्रकारके रथ बनाते हैं जो पृथिवी और आकाश दोनों स्थानों में अच्छे प्रकार चलते हैं। परम वृद्ध होने पर भी युवा पुरुष के समान पृथिवी, आकाश में तक्षा के पिता माता रथ पर चढ़ विचरण करते हैं। प्रत्युत युवा पुरुष से भी बढ कर सर्वत्र भ्रमण करते हैं।

३– एतं वां स्तोम मश्वि नाव कर्म्मा तक्षाम भृगवो न रथम्। न्य मृक्षाम योषणां न मर्य्यें नित्यं सूनुं तनयं दधानाः ॥

१० । ३९ । १४

अर्थः— (भृगवः + न + रथम्) जैसे **भृगुगण** अर्थात् **बुद्धिमान् तक्षागण** सुन्दर सुगठित रथ प्रस्तुत करते हैं तद्वत् [अश्विनौ] हे अश्विनौ हे राजन् ! तथा राज्ञि ! (वाम्) आप दोनों के निमित्त (एतम्+स्तोमम्) इस स्तोम को (अकर्म)

बनाया है (अतक्षाम्) अच्छे प्रकार ग्रथित किया है और (मर्य+न+योषणाम्) जैसे विवाह के समय जामाता को देने के हेतु कन्या को भूषणालंकृत करते हैं और जैसे (तनयम् + सूनुम् + न) वंश वृद्धि कर पुत्र को संस्कृत करते हैं तद्वत् (दधानाः) यज्ञ कर्म्म करते हुए हम लोग (नि+अमृक्षाम्) आपके लिये यह स्तोम संस्कृत करते हैं उसे सुनें। सायण-- ' रथकारा भृगवः ' भृगु का अर्थ रथकार करते हैं। इससे सिद्ध है कि बुद्धिमान पुरुष का यह कार्य्य है

जाति निर्णय पृष्ठ १०३–१०४

श्रीमान् पं० शिवशङ्कर काव्यतीर्थ रचित

४- सतो नूनं कवयः संशि-शीत वाशीभिर्या भिर-

मृताय तक्षथ। विद्वांसः पदा गुह्यानिकर्तन येन देवासो अमृतत्व मानशुः ॥

१० । ५३ । १०

अर्थः—(कवयः+ विद्वांसः) हे मेधावी विद्वानो ! (नूनं+ सतः) निश्चिन्त हो कर वाशीनामक अस्त्र शस्त्रों को (मंशिशीत) अच्छे प्रकार तीक्ष्ण करें (याभिः वाशीभिः) जिन वाशियों से आप लोग (अमृताय) अमृत के योग्य होवें (तक्षथ) उस प्रकार इस कार्य्यको सम्पादनकरें हे विद्वानो [गुह्यानि+पदा) गुह्य निवास स्थानों, किला

वगैरह को (कर्तन) बनाओ [येन] जिस से (देवासः) आप्य लोग (अमृतत्वम्+आनशुः) अमरत्व को प्राप्त होवें ।

जाति निर्णय पृष्ठ १०४

श्रीमान् प० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ रचित

५- तक्षा के लिये धीर, कवि और विपश्चित् शब्द ॥

श्रेष्ठं वः पेशो अधिधायि द
र्शतंस्तोमो वाजा ऋभवस्तं
जुजुष्टन । धीरा सो ी ग्रा
कवयो विपश्चित स्ता व

एना ब्रह्मणा वेदयामसि ।७।

ऋग्वेद मण्डल ४ । सूक्त ३६ । अष्टक ३ ॥

अर्थः— हे (वाजाः+ऋभवः) **विज्ञानी तक्षाओ !** (वः) आपका (श्रेष्ठः] श्रेष्ठ (दर्शतम्) दर्शनीय (पेशः) रूप (अधि+धायि) सर्वत्र प्रसिद्ध है । इस कारण (स्तोमः) यह हमारा स्तव है (तम्+जुजुष्टन) इसे सेविये । आप लोग (धीरासः) **धीर** (कवयः) **कवि** और (विपश्चितः) **विपश्चित= विद्वान्** (हि+स्थः) प्रसिद्ध हैं (तान्+वः) उन प्रसिद्ध आप लोगों को (एना + ब्रह्मणा) इस वाणी से (आवेदया मासि) आवेदन करते हैं । निपुण

तक्षा की प्रशंसा करनी चाहिये जिससे कि वह उत्साहित हो नवीन कला कौशल और शिल्पविद्या निकालाकरे यह इससे उपदेश है

जातिनिर्णय पृष्ठ १०३

श्रीमान् पं० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ रचित

६- तक्षा की प्रशंसा

सवाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरो अस्ता पृतनासु दुष्टरः । स रायस्पोषं स सुवीर्यं दधे यं वाजो विभ्वाँ ऋभवो यमाविषुः ॥ ६ ॥

ऋग्वेद मण्डल ४ । सूक्त ३६ । वर्ग ८

अर्थः—(सः+वाजी+अर्वा) वही वेगवान अश्व है (सः+ वचस्यया +ऋषिः) वही स्तुतिसमन्वित ऋषि अर्थात् अतीन्द्रिय ज्ञानी है (सः शूरः+अस्ता) वही अस्त्र फेंकने वाला शूर है (पृतनासु + दुस्तरः) संग्राम भूमिमें वही दुस्तर है (सः+ रायस्पोषम्+ धत्ते) वही धन सम्पत्ति रखता है (सः+सुवीर्य्यम्) वही सुवीर्य्य रखता है (यम्) जिस पुरुष को (वाजाः) **ज्ञानी** (विभ्वान्) **समर्थ** और (ऋभवः) **काटने में निपुण तक्षागण** (आविषुः) **रक्षा करते हैं ॥**

जातिनिर्णय पृष्ठ १०२

श्रीमान् पं० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ रचित

७-रथ निर्माण करना और यज्ञ में भाग लेना।

रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसो ऽविह्वरन्तं मनसस्परिध्यया। ताँ ऊन्वस्य सवनस्य पीतय आ वो वाजाऋभवो वेदयामासि ॥ २ ॥

ऋग्वेद मण्डल ४। सूक्त ३६ वर्ग ७

अर्थः—(ये+ सुचेतसः) जो बढ़ई शुद्ध चित्त होकर (मनसःपरि + ध्यया) मनके ध्यान से (सुवृतम्) सुन्दर गोल (अविह्वरन्तम्) टेढ़ा

नहीं किन्तु सीधा (रथम् + चक्रु) रथ बनाते हैं [वाजाः+ऋभवः] हे विज्ञानी तक्षाओ! (तान्+ऊ+ वः) उन सब लोगों को (अस्य+ सोमस्य + पीतये) इस सोमयज्ञ में खाने पीने के लिये (आ:वेद यामसि) निमन्त्रण देते हैं ॥२॥ जातिनिर्णय पृष्ठ १०१

श्रीमान् पं शिवशङ्करजी काव्यतीर्थ रचित

८-याभी रसां क्षोद सोद्नः पिपिन्वथु रनश्वं याभी रथ मावतं जिषे । याभिस्त्रि

शोक उस्त्रिया उदाजत ता-
भिरू षु ऊति भिरश्वि ना
गतम् ॥ १२ ॥

ऋग्वेद मं० १ । अ० १६ । सू० ११२ ॥

पदार्थः—हे (अश्विना) अध्यापक और उप
देशको आप दोनों (याभिः) जिन शिल्प
क्रियाओं से (उद्गनः) जल के (क्षोदसा)
प्रवाह के साथ (रसाम्) जिस में प्रशंसित
जल विद्यमान हो उसनदी को (पिपिन्वथुः)
पूर्ण करो अर्थात् नहर आदि के प्रबन्ध से
उस में जल पहुचाओ वा (याभिः) जिन
आने जाने की चालों मे (जिषे) शत्रुओं
को जीतने के लिये (अनश्वम्) बिन घोड़ों
के (रथम्) विमान आदि रथ समूह को

(आवतम्) रखो वा (याभिः) जिन सेना ओं से (त्रिशोकः) जिसको दुष्ट गुण कर्म स्वभाओं में शोक है वह विद्वान् (उस्रियाः) किरणों में हुए विद्युत अग्नि की चिलकों को (उदाजत्) ऊपर को पहुंचावे (ताभिरु) उन्ही (ऊतिभिः) सब रक्षा रूप उक्त वस्तुओं से (स्वागतम्) हम लोगों के प्रति अच्छे प्रकार आइये ॥ १२ ॥

भावार्थः— जैसे सब शिल्प शास्त्रों में चतुर विद्वान् विमानादि यानों में कला यंत्रों को रचके उनमें जल विद्युत आदिका प्रयोगकर

यंत्र से कलाओं को चला अपने अभीष्ट स्थानमेंजाना आना करता है वैसे ही सभा सेना के पति किया करें ॥

ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ ११०२

९- ना सत्याभ्यां बर्हिरिव प्रवृञ्जे स्तोमाँ इयम्र्यभ्रि-येव वातः। यावर्भगाय वि मदाय जायां सेना जुवा न्यूहतू रथेन ॥ १ ॥

ऋग्वेद मण्डल १। अनुवाक १७। सूक्त ११६

पदार्थः—हे मनुष्यो ! जैसे (नासत्याभ्याम्) सच्चे पुण्यात्मा शिल्पी अर्थात् कारीगरों ने जोड़े हुए [रथेन] विमानादि रथ से (यौ) जो (सेना जुवा) वेग के साथ सेना को चलाने हारे दो सेना पति (अर्भगाय) छोटे बालक वा [विमदाय] विशेष जिस से आनन्द होवे उस ज्वानके लिये (जायाम्) स्त्री के समान पदार्थों को (न्यूहतुः) निरन्तर एक देशसे दूसरे देशको पहुंचाते हैं वैसे अच्छा यत्न करता हुआ मैं (स्तोमान्) मार्ग के सूधे होनेके लिये बड़े२ पृथिवी पर्वत आदि को (बर्हिरिव) बढ़े हुए जल को जैसे वैसे (प्र,वृञ्जे) छिन्न भिन्न करता तथा (वातः) पवन जैसे (अभ्रियेव) बद्दलों को प्राप्त हो वैसे एक देश को

(इयर्मि) जाता हूं ॥ १ ॥
भावार्थः—इस मन्त्र में उपमा और वाचक लु०-रथ आदि यानोंमें उपकारी किए पृथिवी विकार जल और अग्नि आदि पदार्थ क्या २ अद्भुत काय्यों को सिद्ध नहीं करते हैं ? ॥१॥

ऋग्वेदभाष्य पृष्ठ ११६३

१०-युवं नरा स्तुवते पज्रियाय कक्षीवते अरदतं पुरन्धिम । कारोतराच्छफादश्वस्य वृष्णः शतं कुम्भाँ असिञ्चतं सुरायाः ॥ ७ ॥

ऋग्वेद मं० १ । अनुवाक १७ । सूक्त ११६

भावार्थः-जो शास्त्रवेत्ताअध्या-

एक विद्वान् जिस शान्ति पूर्वक इन्द्रियों को विषयों से रोकने आदि गुणों से युक्त सज्जन विद्यार्थी के लिये शिल्पकार्य्य अर्थात् कारीगरी सिखाने को हाथ की चतुराई युक्त बुद्धि उत्पन्न कराते अर्थात् सिखाते हैं वह प्रशंसा युक्त शिल्पी अर्थात् कारीगर होकर रथ

आदि को बना सक्ता है शिल्पीजन जिसयान अर्थात् उत्तम विमान आदि रथ में जल घर से जल सींच और नीचे आग जलाकर भाफों से उसे चलाते हैं उससे वे घोड़ोंसे जैसे वैसे बिजली आदि पदार्थों से शीघ्र एक देश से दूसरे देश को जा सक्ते हैं ॥ ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ २००४

११- अयं समह मा तनूह्याते जनाँ अनु। सोमपेयं सुखो रथः ॥ ११ ॥

ऋग्वेद मं० १ । अ० १७ । सूक्त १२०

पदार्थः—हे (समह) सत्कार के साथ वर्त्त-मान विद्वान् आप जो (अयम्) यह (सुखः) सुख अर्थात् जिस में अच्छे२ अवकाश तथा (रथः) रमण विहार करने के लिये जिसमें स्थित होते वह विमान आदि यान है जिस से पढ़ाने और उपदेश करने हारे (अनूह्याते) अनुकूल एक देश से दूसरे देश को पहुंचाए जाते हैं उस से (मा) मुझे (जनान्) वा मनुष्यों अथवा (सोम पेयम्) ऐश्वर्य्य युक्त मनुष्यों के पीने योग्य उत्तम रस को (तनु) विस्तारो अर्थात उन्नति देओ ॥ ११ ॥

भावार्थः— जो अत्यन्त उत्तम अर्थात् जिस से उत्तम और न बन सके उस यान का बनाने वाला शिल्पी हो वह सब को *सत्कार करने योग्य है ।

ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ २१३२

---

* अर्थात सबको उसका सत्कार करना चाहिये

[५] आजकल शिल्पकार्य्य करने वालोंमें किस२ वर्ण के लोग सम्मिलित हैं?

प्रश्न—आप कहते हैं कि शिल्पकार्य्य करने वाले पञ्चालब्राह्मण हैं। परन्तु हमतो प्रत्यक्ष में यही देखते हैं कि बढ़ई, लुहार या पत्थर आदि का काम करने वालों (जिन कामों को कि आप शिल्पकार्य्य कहते हैं) में कहार चमार आदि सब ही जातियों के लोग सम्मिलित हैं। फिर आप उन को ब्राह्मण कैसे कहते हैं?

उत्तर—यों तो यदि आप डब्ल्यू कुरुक बी० ए० रचित कास्टस् एंड ट्राइब्स आव नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज [Castes & Tribes of

North Western P. & Oudh by W. Crooke B.A. Bengal civil service नामक पुस्तक को जो कि उन्हों ने मनुष्य-गणना की रिपोर्ट के आधार पर लिखी है अवलोकन करेंगे तो उससे प्रत्यक्ष जानपड़ेगा कि संयुक्त प्रदेश आगरा व अवध में ८५१ प्रकार के बढ़ई हैं। जिनमें धींवरबढ़ई, कहारबढ़ई, चमारबढ़ई, इत्यादि सब ही सम्मिलित हैं । अर्थात् वर्त्तमान काल में जो जीविका के निमित्त जाति बनी हुई है उसमें ब्राह्मण से लेकर भङ्गा पर्य्यन्त सबही वर्ण और सम्प्रदायों के मनुष्य विद्यमान् हैं । सोमहाशय ! स्मरण रहे कि हम इनसब जाति और सम्प्रदायों के समूह को पञ्चाल ब्राह्मण नहीं कहते हैं । पञ्चालब्राह्मण वह ही हैं जो महर्षि विश्वकर्मा के वंशज हैं । इन

सब लोगों के एक ही शब्द (बढ़ई) से पुकारे जाने के कारण उच्च वर्ण के लोगों को भी उसी श्रेणी में मिलना पड़ता है। इस लिये आवश्यक्ता हुई कि लेख द्वारा इस भ्रम को भी सर्व साधारण पर भलीप्रकार प्रकट करादिया जावे। जिससे आगे ऐसा न हो कि हर लकड़ी, पत्थर, लोहा आदि के काम करने वालों को शूद्र कह दिया जावे जैसे कि कृषिकर्म्म वैश्यकर्म्म है परन्तु आज दिन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों ही वर्णों के मनुष्य इस को करने लगे हैं अत एव चमारादि के खेती करने से क्या यह परिणाम निकल सक्ता है कि "कृषिकर्म्म" नीच मनुष्यों के करने योग्य ही काम है। यदि नहीं निकल सक्ता तो केवल शिल्पी लोगों के ही साथ ऐसा अनुचित बर्ताव क्यों किया

जाता है ? जब वेदों स्मृतियों तथा अन्य पुस्तकों से शिल्प ब्राह्मणकर्म्म सिद्ध होता है तो इस काम को कहार चमारादि के करने लगने से ही क्यों नीच कर्म्म बतलाया जाने लगाहै देखिये डबल्यूकुरुक साहिबMr. W Crooke इस विषय में क्या सम्मति देते हैं:

As the subdivisions show, the caste is probably a functional group recruited from various castes following the common occupation of carpentry. जाति के पुनर्विभागों से प्रकट होताहै कियह जाति कामकरने वालों का एक समूह है जिनमें बढ़ई के काम द्वारा एक ही प्रकार से जीविका करने के निमित्त विविध जातियों के लोगसम्मिलित होगये हैं

इस के अतिरिक्त इन ८५९ प्रकार के शिल्पकारों के खान पानादि का सम्बन्ध

अपनी २ बिरादरी से ही है। परन्तु जो पश्चात ब्राह्मणादि लोग इनमें सम्मिलित हैं द्विजन्मा लोग उनके हाथ का पानी पीते हैं पक्का (पूरी, पराँठादि) भोजन खाते हैं। और वह लोग भी (पं० ब्राह्मणादि) कच्चा खाना (दाल, भातादि) या तो अपनी बिरादरी के लोगों का बनाया हुआ या निरा मिषभोजी ब्राह्मण के हाथ का खाते हैं॥ देखिये उपरोक्त साहिब बहादुर भी इस विषय में यही कहते हैं. They eat pakki or food cooked with butter by all Brahmans, Kshatrayas and Vaishyas except kalwars. They eat kachi cooked by Brahmans & Caste men. All Hindoos drink water from their hands. Some Brahmans will eat pakki cooked by them.

[६] शिल्पीब्राह्मणों के निज कर्तव्य में शिथिल होने के कारण ॥

महाभारत के युद्ध में बहुत से राजाओं व विद्वानों के नष्ट हो जाने से देश बहुत ही बुरी दशा को प्राप्त हो चुका था। पाण्डवों का अश्वमेध यज्ञ इस देश में होने वाले यज्ञों में से अन्तिम ही यज्ञ समझना चाहिये। क्षत्रियों के निर्बल रह जाने के कारण, इस युद्ध के पश्चात् फिर कोई ऐसे युद्ध इस देश में नहीं हुए जिन में कि राजा वा योद्धा लोगों ने अस्त्र. शस्त्र लेकर और रथों में बैठ कर युद्ध किया हो। धीरे २ वैदिक धर्म के नष्ट प्रायसा हो जाने के कारण बड़े २ यज्ञ होना भी बन्द होगया। गुरुकुल प्रणाली भी साथ

साथ बन्द हुई । इस लिये आचार्य्यों को वेद पढ़ाने, याजकों वा ऋत्विजों को यज्ञ करने के अवसर भी हाथ से निकल गये । जब लड़ाई भिड़ाई व यज्ञादि कर्म्म इस प्रकार बन्द हो गये तो राजा महाराजाओं को शिल्पी ब्राह्मणों की भी आवश्यक्ता न रही । एक बड़े समय तक देश को अन्धकारमय दशा में रहना पड़ा इसी लिये " शिल्प " और " विद्या " शब्द केवल कहने ही मात्र को रहगये थे । शिल्प की उन्नति केवल उत्तम राज्य होने ही से हो सक्ती है. बृटिश गवर्नमेण्टके आने से पहले यहां राज्यका ऐसा उत्तम प्रबन्ध न होने के कारण देश अधोगति को प्राप्त हो चुका था, सो यह कब सम्भव था कि शिल्पीलोग अपनी प्राचीन (महाभारत युद्धसे पहिले की) उन्नति को स्थिररखसक्ते

बड़े भाग्य से ऐसा सुराज्य मिलने के कारण इस देश वासियों को पुनः अपने शास्त्रादि पढ़कर प्राचीन समय का वृतान्त मालूम हुआ और फिर से उन्नति की चेष्टा होनी आरम्भ हुई। गवर्नमेण्ट ने इस देश के शिल्प को पुनर्जीवित करने के अभिप्राय से बहुतसे नगरोंमें शिल्पविद्यालय (Engineering Colleges, and art schools) खोल दिये हैं। इस से आशा है कि प्राचीन समय के शिल्पाचार्य्यों की सन्तान बहुत शीघ्र उन्नतिके शिखर पर पहुंचेगी। क्योंकि इस जाति की उन्नति के चिन्ह कुछ २ मालूम होने लगे हैं। जैसा कि सन् १९०१ ई० की मनुष्य गणनाकी रिपोर्टसे भी विदित होता है

Of the artizans the TARKHANS are almost rising to the status of a

professional caste, as they acquire qualifications as Engineers. Probably no other caste has made such strides in the past twenty years as this.

Census of India 1901
Vol: XVII Part I Page 371

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

सूचना

सर्व साधारण से सविनय निवेदन है कि इस पुस्तक को पढ़ने के पश्चात् यदि किसी महाशय को कोई शङ्का रह जावे तो वह कृपया मुझको लिखें, यथा शक्ति उनकी शङ्काओं का निवृत किया जावेगा। परन्तु पुराणादिक ग्रन्थों से प्रमाण लेकर इस के विरुद्ध लिखने का वृथा कष्ट न उठावें, क्योंकि इस पुस्तक में जो २ प्रमाण उद्धृत किये गये हैं वह बहुधा वेदों के हैं और शेष वेदानुकूल होनेसे लियेगए हैं। और वेद विरुद्ध बात निम्नलिखित प्रमाण से भी प्रमाणीक नहीं मानी जा सक्ती॥

श्लोक

श्रुति स्मृति पुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते।
तत्र श्रौतं प्रमाणं तु तयोर्द्वैधे स्मृतिर्वरा॥

व्यास संहिता।

दूसरी प्रार्थना यह है कि पाठक प्रेस की अशुद्धियों पर ध्यान न देकर पुस्तक के वास्तविक मन्तव्य पर विचार करें ।

धन्यवाद

मैं अन्तष्करणसे अपने परम मित्र ज्वालापुर निवासी पण्डित आशाराम धीमान् बी. ए. तथा मेरठ निवासी पं० भगवान दास शर्म्मा का धन्यवाद करता हूं । कि जिन्होंने इस पुस्तकके रचने में लेख द्वारा सहायता दी है और आशा रखता हूं कि आगे के लिये भी इसी प्रकार मेरे उत्साह को वर्द्धित करते रहेंगे, जिस से मैं आपका और विशेष उपकार मानूंगा ॥

निवेदक

मूलचन्द

पुस्तक मिलने का पता

डाक्टर मूलचन्द धीमान्

सलावा ज़िला मेरठ

— दूसरा पता —

आत्माराम धीमान्

मन्त्री प्रबन्ध कारिणी सभा

"विश्वकर्मा धीमान् शिल्पविद्यालय"

ज्वालापुर ज़िला सहारनपुर